ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 224-226

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

# प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थायें एवं पद्धतियां : एक अध्ययन

**आशुतोष कुमार मिश्रा**

शोध अध्येता–राजनीति विज्ञान, राजनीति विज्ञान अध्ययनशाला,

जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म0प्र0), भारत

**Received- 08.07.2020, Revised- 13.07.2020, Accepted - 18.07.2020 E-mail: ashutoshm578@gmail.com**

***सारांश :*** *प्राचीन भारत में तत्समय प्रचलित लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों के विषय में यह कहा जाना शोध की उपादेयता की दृष्टि से आवश्यक हो जाता है कि ये संस्थायें व पद्धतियां प्राचीन भारत में लोकतंत्र की झलक दिखाने में हम सभी के लिये एक अनुपम एवं अद्वितीय प्रयास कहीं जा सकती है। प्राचीन भारत की गौरवशाली परम्परा को जीवंत बनाये रखने में अपने उद्भव काल से सतत प्रयत्नशील ये प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थायें एवं पद्धतियों निश्चित रूप से कुछ न कुछ गुणों को अपने अन्दर समेटे हुये है। प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिन्तन वस्तुतः आध्यात्मिकता की ओर झुका हुआ प्रतीत होता है, परन्तु यह धर्म विशेष की ओर न होकर नैतिक आध्यात्मिकता की ओर झुका हुआ है। प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों में जो नैतिक आध्यात्मिकता का समावेश किया गया है, उसी आधार पर ये लोकतांत्रिक पद्धतियां व संस्थायें, नैतिक मूल्यों, आदर्शो एवं सिद्धान्तों को आत्मसात करते हुये प्राचीन भारत में लोकतंत्रीय परम्परा को आगे बढ़ाने में समर्थ हुई है।*

***कुंजीभूत शब्द– तत्समय , लोकतांत्रिक संस्थाओं, उपादेयता , आध्यात्मिकता का समावेश , संस्थायें, आदर्शो ।***

वस्तुतः प्राचीन भारतीय शासन पद्धति जनकल्याण की ओर सदैव से अभिप्रेरित रही है, और प्राचीन भारतीय शासन पद्धति में जनकल्याण साध्य के रूप में लक्षित हुआ, जनकल्याण रूपी साध्य की प्राप्ति, प्राचीन भारत में लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों रूपी साधन के माध्यम से ही सम्भव हो पाया। प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक आदर्शो, मूल्यों एवं सिद्धान्तों के सिंहावलोकन के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि प्राचीन भारतीय शासन पद्धति ने हमें प्राचीन मूल्यों के रूप में स्वतन्त्रता, समानता, न्याय, बंधुता और जनकल्याण की भावना प्रदान की, वही प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक आदर्शो के रूप में उत्तरदायी शासन, नागरिक सेवायें, लोककल्याणकारी राज्य, बहुमत आधारित निर्णय–निर्माण प्रक्रिया, शासकीय कार्यो में जन भागीदारी के गुणों से हम परिचित हुये, तो वही प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक सिद्धांतों के रूप में हम सम्प्रभुता, शासन का विकेन्द्रीकरण, शक्ति पृथक्करण, धर्मराज्य (पंथ निरपेक्षता) अर्न्तराज्यीय सम्बन्ध एवं कूटनीति जैसे बहुमूल्य सिद्धान्तों से परिचित हो सके। प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थायें एवं पद्धतियां अपने गर्भ में कई विशिष्ट विशेषताओं के गूढ़ रहस्य छिपाये हुये है, प्रस्तुत शीर्षक के अन्तर्गत हम प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों का अध्ययन कर अपनी ज्ञान पिपासा को संतृप्त करने का लघु प्रयास करेगें।

**1. आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख–** भारत का प्राचीन गौरवशाली शासन उसके आध्यात्मिकता की ओर इंगित करता है, प्राचीन इतिहास भारत को आदि सनातन काल से एक आध्यात्मिक देश के रूप में स्वीकार करता है, यहाँ के लोगो ने आत्मा और परमात्मा जैसे गूढ़ रहस्यों को जाना है। यही कारण है कि प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थायें व पद्धतियां भी भारत के आत्मतत्व से अछूती नहीं कहीं जा सकती हैं। अध्यात्मिकता को हम किसी धर्म विशेष के प्रति जोड़कर प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों की विशेषताओं का विश्लेषण नहीं कर सकते हैं।

प्राचीन भारत में प्रचलित लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों के लिये स्वकर्तव्य पालन ही धर्म हैं, और नैतिकता युक्त पथ पर चलकर जनकल्याण रूपी साध्य की प्राप्ति ही उनके लिये यथेष्ट आध्यात्मिकता का क्षेत्र कहा जा सकता है, वस्तुतः प्राचीन भारतीय संस्कृति अपने आप में नैतिकता रूपी पहचान छिपाये हुये रखती थी, और प्राचीन भारतीय संस्कृति ने तत्समयी शासनपद्धति एवं उनकी लोकतांत्रिक संस्थाओं पर नैतिकता रूपी धर्म/आध्यात्म का ऐसा सकारात्मक प्रभाव डाला कि वह आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख होकर अपने अभीष्ट संकल्प जनकल्याण को साकार करने लगी, एवं राज्य में धर्म, नैतिकता एवं आध्यात्मिकता को पश्रय मिलने लगा।

**2. राजधर्म की स्थापना–** प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों की विशेषताओं के विष्लेशण क्रम में, इन संस्थाओं या पद्धतियों की विशेषताओं में यह भी शामिल किया जा सकता है कि इन संस्थाओं ने प्राचीन भारत में शासन पद्धतियों में राजधर्म की स्थापना

**अनुरूपी लेखक**

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

करवाने मे अपना अमूल्य योगदान प्रस्तुत किया। मनुस्मृति में राजधर्म की व्याख्या करते हुये मेघातिथि ने कहा है ''राजधर्म राजा के समस्त कर्तव्यों का लेखा है, एक राजा के दृष्टार्थ कार्य और दूसरे, राजा के अदृष्टार्थ कार्य''

वस्तुतः प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थायें एवं पद्धतियां, राज्य में राजधर्म की स्थापना करने में सहायक कही जा सकती है। राजधर्म के अन्तर्गत जैसा कि मनुस्मृति उल्लिखित करती है कि राजधर्म राजा के कार्यो का लेखा है, और कौन यह चाहेगा कि उसके कृत्यो का लेखा खराब हो, अतः प्रत्येक राजा मनसा, वाचा और कर्मणा, जनकल्याण की ओर सदैव तत्पर रहता था तथा राज्य में नैतिकता, विधिसम्मत तथा युक्तियुक्त आचरणों से परिपूर्ण शासन की स्थापना करना ही अपना राजधर्म समझता था।

**3. लोकहित की नीति की स्थापना–** प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों के अध्ययन में यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि इन संस्थाओं एवं पद्धतियों ने प्राचीन भारतीय शासन में लोकहित की नीति की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। हमें यह विदित है कि प्राचीन भारत में राजाओं की नियुक्ति लोकतंत्रीय पद्धति निर्वाचन के माध्यम से भी होने के प्रमाण मिलते है, अतः निश्चित तौर पर एक राजा के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि वह उन संस्थाओं के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का कुशलतापूर्वक निर्वहन करें, जिन्होनें उसका वरण किया, शासक द्वारा अपने उत्तरदायित्वों के निर्वहन ने ही एक लोकनीति के रूप में लोकहित को जन्म दिया, और प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों ने इस प्रकार प्राचीन भारत में लोकहित की नीति के उद्भव में अपना बहुमूल्य योगदान प्रस्तुत किया।

**4. धर्म एवं राजनीति के समन्वय –** धार्मिक गतिविधियों का राज्य की शासन पद्धति, उसके स्वरूप संगठन और राजनैतिक संस्थाओं तथा विचारधाराओं पर पर्याप्त प्रभाव रहा हैं। किसी समय राजनैतिक विचारों को धर्म का मातहत बनना पड़ा और कभी धर्म राजनैतिक विचारो से गौण हो गया। इस प्रकार धर्म और राजनीति, राजनैतिक विचारों, संस्थाओं एवं पद्धतियों का पारस्परिक सम्बन्ध समय चक्र के अनुसार, परिवर्तित होता रहा। राजनीति और धर्म के पारस्परिक घनिष्ठ सम्बन्ध का आभास इसी तथ्य से हो जाता है कि जिन ग्रन्थों की प्राचीन भारतीय राजनीति, संस्थाओं, पद्धतियों एवं विचारधाराओं का मुख्य ग्रन्थ स्वीकार किया जाता है वे धार्मिक दृष्टि से भी बहुत ही उपयोगी बताये गये है। प्राचीन भारत में राज्य और उसकी लोकतंत्रीय संस्थाओं एवं पद्धतियों की उपयोगिता का मापदण्ड वहां के लोगों की धार्मिक रूचि को माना जाता है, यदि किसी राज्य में धर्म, नैतिकता एवं सदाचार का स्तर ऊँचा है, तो निश्चित रूप से उस राज्य की राजनीतिक विचारधारा, संस्थायें एवं पद्धतियां श्रेष्ठतम रूप में स्वीकार की जाती है। वस्तुतः प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थायें एवं पद्धतियां निश्चित रूप से धर्म एवं राजनीति में समन्वय करते हुये राज्य को अभीष्ट नैतिकता युक्त लोककल्याण के मार्ग में ले जाने में सफल होकर धर्म और राजनीति में समन्वय में सहायक सिद्ध हुई।

**5. उत्तरदायी एवं जनकल्याणकारी राज्य की स्थापना –** प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों ने प्राचीन भारत शासन पद्धति को एक उत्तरदायी शासन पद्धति में परिवर्तित करने में अग्रणी भूमिका निभाई है। प्राचीन भारतीय इतिहास यह अमिट लेखो में लिखता है, कि शासक प्रसन्नतापूर्वक अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन करें, उसके उत्तरदायित्वों के निर्वहन से ही राज्य विकास के नित नये पथ सोपान प्राप्त कर सकेगा और यदि राजा अपने उत्तरदायित्वों के निर्वहन में असफल हो जाता है तो यही असफलता उसके पतन का भी कारण बनती है। वस्तुतः प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों ने राज्य में उत्तरदायी पूर्ण शासन की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विधायिका रूपी लोकतांत्रिक संस्था की महत्वपूर्ण इकाई सभा और समिति द्वारा राजा का निर्वाचन, अंधक–वृष्णि गणराज्य में राज्य के अध्यक्ष के निर्वाचन के लिये राजनैतिक दलों की प्रतिबद्धता, कार्यपालिका रूपी लोकतांत्रिक संस्था में शामिल मंत्रीमण्डल के सामूहिक विनिश्चय का राजा द्वारा आदर निश्चित रूप से राज्य में उत्तरदायी शासन की प्रतिबद्धता में इन लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों के योगदान को परिलक्षित करता है।

इसके साथ ही उत्तरदायी शासन की यही भावना, राज्य को लोककल्याणकारी राज्य में भी परिवर्तित करने में अपनी अग्रणी भूमिका का निर्वहन करती है।

**6. अधिकारों एवं कर्तव्यों युक्त नागरिक समाज की स्थापना –** प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों ने एक ऐसे समाज की स्थापना करने में भी अपनी भूमिका निभाई है, जिस समाज में व्यक्तियों के पास अधिकार, स्वतन्त्रतायें एवं कर्तव्यों का सुनिश्चित समावेश शामिल रहा हो।

प्राचीन भारतीय राजनीति, शासन पद्धति एवं संस्थाओं तथा पद्धतियों का लक्ष्य सदैव व्यक्ति का चहुँमुखी विकास करना था, इस हेतु प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थायें एवं पद्धतियां, व्यक्ति के सर्वागीण विकास के मार्ग में आने वाली बाधाओं के मार्ग में बाधायें उत्पन्न कर व्यक्ति को निष्कटंक अधिकार प्रदान करती थी। इसके साथ ही

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों ने राज्य के प्रति कर्तव्यों का निर्धारण भी व्यक्तियों के लिये किये है, ताकि एक अधिकारों एवं कर्तव्यों युक्त समाज की स्थापना कर उन्नत राष्ट्र की आधारशिला रखी जा सके।

**7. दण्ड नीति का महत्व–** प्राचीन भारतीय राजनीति में दण्ड के महत्व का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि उसे एक नाम दण्डनीति भी प्रदान किया गया हैं। दण्डनीति को प्रमुख विधाओं के रूप में लाने का श्रेय तत्कालीन लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों को यदि प्रदान किया जाये तो कोई अति संयोक्ति नही कही जा सकती है। प्राचीन भारतीय साहित्य इस बात पर बल देता है कि दण्डनीति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है और सभी विधायें उसके मातहत रखीं जा सकती है। वस्तुतः प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्था जिसे न्यायपालिका का नामकरण प्रदान किया गया, निश्चित रूप प्राचीन भारत में दण्ड नीति को राज्य की शासनपद्धति के सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक के रूप में स्थापित करने में पूर्णतया सफल रही और इसी दण्डनीति के आधार पर राज्य का शासक राजा, राज्य में नैतिकता युक्त शासन की स्थापना करते हुये अर्हनिश जन कल्याण की भावना को पल्लवित एवं पोषित करता रहा। वस्तुत यह कहा जा सकता है कि राज्य के शासक के पास लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों ने दण्डनीति के रूप में वह हथियार प्रदान किया था, जिसके माध्यम से शासक राज्य को नैतिकता के मार्ग पर ले जाते हुये जनकल्याण की भावना से एक श्रेष्ठ शासन की स्थापना करना चाहता है और उसे अपने अभीष्ट की प्राप्ति में सफलता भी प्राप्त होती है।

दण्ड के अभाव में राज्य एवं समाज दोनों का ही अस्तित्व समाप्त हो जाता है, लोकतांत्रिक संस्थायें व पद्धतियां भी दण्ड के अभाव में मृतप्राय सी हो जाती है।

**इस सम्बन्ध में डॉ0 हरिष्चन्द्र षर्मा का मत है–** ''दण्डनीति का न्यायोचित रूप से प्रयोग किया जाना आवश्यक है, यदि ऐसा नहीं किया गया तो राज्य में अव्यवस्था, अराजकता फैल जायेगी, राज्य की संस्थायें निरूउद्देश्य एवं अर्थहीन हो जायेगी।''

वस्तुतः डॉ0 हरिश्चन्द्र शर्मा का उपरोक्त मत निश्चित रूप से यह अभिनिर्धारित करता है कि दण्डनीति के अभाव में राज्य सहित उसकी अन्य संस्थाओं तथा पद्धतियों का कोई अर्थ नही रह जायेगा, इस प्रकार डॉ0 हरिश्चन्द्र शर्मा के मत से यह भी स्पष्ट होता है कि दण्डनीति का सृजन भी लोकतांत्रिक संस्थायें करती है और अपने स्वयं के विनाश में भी लोकतांत्रिक संस्थायें ही उत्तरदायी कही जायेगी, यदि उन्होनें दण्डनीति का सोउद्देश्य एवं औचित्यपूर्ण तथा युक्ति–युक्त उपयोग नही किया।

सारांशतः प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं पद्धतियों ने प्राचीन भारतीय शासन पद्धति को नये आयाम प्रदान किये है तथा इन संस्थाओं एवं पद्धतियों नें प्राचीन भारत में लोकतंत्रीय आदर्शो, मूल्यों एवं सिद्धान्तों की स्थापना कर, आधुनिक भारतीय राज्य व्यवस्था के लोकतंत्रीय विकास की सुदृढ़ आधारशिला रखी है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ0 श्यामलेश कुमार तिवारी ''अर्थशास्त्र'' चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी 2017।
2. वाजपेयी राघवेन्द्र ''वार्हस्पत्य राज्य व्यवस्था'' चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी 1966।
3. आचार्य शिवराज ''मनुस्मृति'' चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी 2008।
4. शर्मा जे.पी. ''प्राचीन भारत में गणतन्त्र'' ग्रन्थ विकास, जयपुर 1966।
5. वर्मा वी.पी. ''आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन'' लक्ष्मी नारायण, आगरा 2010।
6. वर्मा हरिश्चन्द्र ''प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाये'' कॉलेज बुक डिपो, जयपुर 1996।
7. अल्टेकर ए.एस. ''प्राचीन भारत में राज्य और सरकार'' मोतीलाल बनारसीदास, पटना 1935 चतुर्थ संशोधित संस्करण 1970।
8. डॉ0 परमात्मा शरण ''प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार और संस्थायें'' मीनाक्षी प्रकाषन मेरठ 1979
9. डॉ. शर्मा रामशरण ''प्राचीन भारत में राजनैतिक विचार एवं संस्थाए'' राजकमल प्रकाशन नईदिल्ली 1992।
10. राष्ट्रधर्म मासिक पत्रिका संस्कृति भवन लखनऊ वर्ष 70 अंक 8 चैत्र वैशाख 2074।
11. शान्ति पर्व महाभारत।
12. अथर्ववेद।
13. शुक्रनीतिसार।
14. रामचरितमानस, गीता प्रेस गोरखपुर।

*****